स्वाध्याय संग्रह

दीवानचन्द
प्रिंसिपल, डी. ए. व्ही. कॉलेज, कानपुर.

आर्य समाज पंजाबी बाग
पुस्तकालय
सं० 2119
1243
नई दिल्ली-26

प्रकाशक :

श्रीराम शर्मा,

दयानन्द कॉलेज, सोलापूर.

मुद्रक :

के. ग. शारंगपाणी,

आर्यभूषण मुद्रणालय, ९१५/१ शिवाजीनगर, पुणें ४.

। ओ३म् ॥

असतो मा सद्गमय,
तमसो मा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्माऽमृतं गमय।

शतपथ ब्रा० [१४।३।१।३०]

हे प्रभो ! मुझे असत्य से हटा कर सत्य की ओर अन्धकार से हटा कर प्रकाश की ओर, मृत्यु से हटा कर अमरता की ओर ले चलो।

हे प्रभो ! मला असत्याकडून सत्याकडे, अन्धकारापासून प्रकाशाकडे, मृत्यूपासून अमरतेकडे घेऊन चल.

OM

CONTENTS

PAGES

I. Our Daily Prayer 1-18

II. THE VEDAS

(*a*) On the nature of God; (*b*) Social well-being: Be ye united and organised; Good company; Universal goodwill; Fearlessness; (*c*) Individual welfare; Religion in practice— *Sambhuti* and *Asambhuti* Knowledge and non-knowledge; Noble Resolves and Aspirations; Right guidance of Reason and the Quest of Wisdom; Life of Self-abnegation; Keep awake and alert; The path of progress; Energy and control; Emancipation: How attained; The triumphant invulnerable soul 19-61

III. THE UPANISHADS

(*a*) The Holy name—OM; (*b*) Arise, awake; (*c*) The Infinite Self and the Finite Self; (*d*) The supreme Self; How realised ? (*e*) on the nature of God 62-79

IV. THE BHAGAVAD GITA

(*a*) The Soul is Eternal and Immortal; (*b*) The beloved of Krishna; The Ideal Saint; (*c*) The way to success in Life. 80-94

अनुक्रमणिका

१. दैनिक प्रार्थना १–१८

२. वेद

(अ) ईशस्वरूपविषयक (ब) सामाजिक सुस्थिति : सत्संगति, वैश्विक सदिच्छा; निर्भयता; (क) वैयक्तिक कल्याण; व्यावहारिक धर्म – सम्भूति असम्भूति, ज्ञान व अज्ञान, उदात्त निश्चय व आकांक्षा; बुद्धीचें सन्मार्गदर्शन व ज्ञानाची उपासना; निस्वार्थ जीवन; उत्तिष्ठत जाग्रत; प्रगतीची दिशा, उत्साह व संयमन; मुक्ति, तिची साधना; सर्वातीत व निर्लेप आत्मा १९–६१

३. उपनिषदें

(अ) पवित्र जप — ॐ (ब) उत्तिष्ठत जाग्रत (क) जीवात्मा व परमात्मा (ड) परमात्म्याची उपासना (ई) ईशस्वरूपविषयक. ६२–७९

४. भगवद्गीता

(अ) आत्मा शाश्वत व अमर आहे (ब) भगवंतास प्रिय कोण होतात — आदर्श साधु (क) यशस्वी जीवनाचा मार्ग ८०–९४

ॐ

CHAPTER I.

I. OUR DAILY PRAYER

आचमनमंत्रः

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टय
आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः।

यजु० ३६–१२

सबका प्रकाशक, सबको आनन्द देने वाला और सर्व-व्यापक ईश्वर, मनोवाञ्छित आनन्द के लिये और पूर्णानन्द की प्राप्ति के लिये हमको कल्याणकारी हो, वही परमेश्वर हम पर सब ओर से सुख की वर्षा करे।

हा सर्व प्रकाशक, सर्वसाक्षी परमेश्वर आमच्या आकांक्षा पूर्ण करून आम्हांस सुखसंपन्न करो! तो आम्हांवर सर्व बाजूंनीं सुख-शांतीचा वर्षाव करो!

इन्द्रियस्पर्शः

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुः चक्षुः। ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कण्ठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्यां यशोबलम्। ओं करतल-करपृष्ठे।

हे ईश्वर ! हमारी वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, नाभि, हृदय, कण्ठ, शिर, बाहु, करतल (हथेली) और करपृष्ठ (हाथ के पीछे का भाग) सब बलवान् हों और कीर्ति के कारण हों।

हे ईश्वरा ! माझी वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, नाभि, हृदय, कण्ठ, शिर, बाहु, करतल आणि करपृष्ठभाग हीं सर्व समर्थ आणि यशस्वी होवोत !

मार्जनमंत्राः

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः पुनातु नाभ्याम। ओं तपः पुनातु पादयोः। ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।

हे समस्त जगत् के जीवन के हेतु, प्राण से भी प्रिय परमात्मा, मेरे शिर में पवित्रता हो। हे धर्मात्माओं को सब दुःखों से अलग करके सर्वदा सुख में रखनेवाले प्रभु! मेरे नेत्रों में पवित्रता हो। हे सर्वव्यापक, सुखस्वरूप ईश्वर! मेरे कण्ठ में पवित्रता हो। हे महान्, पूजनीय प्रभु! मेरे हृदय में पवित्रता हो। हे सब को उत्पन्न करने वाले ईश्वर! मेरी नाभि में पवित्रता हो। हे दुष्टों के संताप-कारक, ज्ञानस्वरूप परमात्मा, मेरे पैरों में पवित्रता हो। हे अविनाशी ईश्वर, मेरे शिर में फिर पवित्रता दो। हे सर्वव्यापक प्रभु! आप सर्वत्र पवित्रता करें।

हे जगज्जीवना, प्राणप्रिय परमेश्वरा माझ्या मस्तकाचे ठायीं पावित्र्य नांदो. धर्मात्म्यांना सर्व दुःखापासून दूर ठेवून नेहमीं सुखांत ठेवणाऱ्या प्रभो, माझ्या डोळ्यांत पावित्र्य नांदो. हे सर्वव्यापक सुख-स्वरूप ईश्वरा! माझ्या कण्ठांत पावित्र्य नांदो. हे परमपूज्य प्रभो! माझ्या हृदयांत पावित्र्य नांदो. हे जगत्कारण ईश्वरा! माझ्या नाभींत पावित्र्य नांदो. हे दुष्टशासका ज्ञानस्वरूप परमेशा माझ्या पायांत पावित्र्य नांदो. हे अविनाशी ईश्वरा, माझ्या मस्तकीं पुन्हां पावित्र्य नांदो. हे सर्वव्यापक प्रभो! मला नखशिखान्त पवित्र करा.

प्राणायाममंत्राः

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम।

तैत्ति० आ० प्रपा० १० अनु० ७१

हे प्रभु! आप समस्त जगत् के जीवन के हेतु और प्राण से भी प्रिय हैं। आप धर्मात्माओं को सब दुखों से अलग कर के सर्वदा सुख में रखने वाले हैं। आप सर्वव्यापक, सब को धारण कर नियम में रखने वाले और सुखस्वरूप हैं। आप महान् और पूजनीय हैं। आप सब को उत्पन्न करने वाले हैं। आप दुष्टों के संतापकारक और ज्ञानस्वरूप हैं। आप अविनाशी हैं।

ज्यास आम्ही ध्यातों व पूजितों असा तो परमेश्वर सर्वज्ञ, सदानंद, सर्वशक्तिमान्, स्वयंभू, न्यायनिष्ठुर व सत्यप्रिय आहे.

अघमर्षणमंत्राः

ओं ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽर्णवः ॥ १ ॥ समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥ २ ॥ सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ ३ ॥

ऋ० अ० ८ अ० ८ व० ४८

ईश्वर के अनन्त ज्ञानमय सामर्थ्य से सब विद्या का कोष वेद और त्रिगुणात्मिका प्रकृति प्रकट हुई। उसी के सामर्थ्य से (प्रलय के पश्चात् एक हज़ार चतुर्युगी तक रहने वाली) रात्रि प्रकट हुई। उसी के सामर्थ्य से पृथिवी और मेघमण्डल में जो महासमुद्र है वह भी उत्पन्न हुआ। समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् संवत्सर अर्थात् क्षण, मुहूर्त्त, प्रहर आदि काल विभाग भी विश्व को स्वभाव से ही वश में रखने वाले प्रभु ने उत्पन्न किये। सब को धारण करने वाले प्रभु ने पूर्वकल्प के समान ही सूर्य, चन्द्र, द्युलोक, पृथिवी, अन्तरिक्ष आदि का निर्माण किया।

ईश्वराच्या ज्ञानमय सामर्थ्यानें सर्व विद्येचा कोष वेद आणि त्रिगुणात्मिका प्रकृति प्रगट झाली. त्याच्याच सामर्थ्यानें (प्रलयानन्तर चतुर्युग सहस्रान्त रात्र प्रगट झाली) त्याच्याच सामर्थ्यानें पृथिवी आणि मेघमंडळांत जो महासमुद्र आहे तोही उत्पन्न झाला. समुद्राच्या उत्पत्तीच्या नन्तर संवत्सर अर्थात् क्षण, मुहूर्त, प्रहर आदि काल-विभाग सुद्धां विश्वाला स्वभावानेंच वशीं ठेवणाऱ्या ईश्वरानें उत्पन्न केलें. सर्वांचा सांभाळ करणाऱ्या प्रभूनें पूर्व कल्पासारखेंच सूर्य, चन्द्र, द्युलोक, पृथिवी, अन्तरिक्षादि निर्माण केलें.

मनसापरिक्रमामंत्राः

प्राचीदिगग्निरधिपतिरसितो रक्षिताऽऽदित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ १ ॥

अथर्व कां० ३ अ० ६ व० २७ मं० १

अग्नि अर्थात् ज्ञानस्वरूप प्रभु पूर्व की दिशा का स्वामी है। वह बंधनरहित और सब प्रकार से रक्षा करने वाला है जिसके बाण आदित्य की किरण हैं। इन सब गुणों के अधिपति ईश्वर के रक्षक गुणों को और उसके बनाये हुए रक्षक पदार्थों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो प्राणी हम से द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं उसे हम प्रभु के न्यायाधीन करते हैं।

अग्नि अर्थात् ज्ञानस्वरूप प्रभु पूर्व दिशेचा स्वामी आहे. तो बन्धनरहित आणि सर्व प्रकारें रक्षण करणारा आहे. त्याचे बाण आदित्याची किरणे आहेत. ह्या सर्व गुणांच्या अधिपतिभूत ईश्वराच्या रक्षक गुणांना आणि त्यानें निर्माण केलेल्या रक्षक पदार्थांना आम्ही पुन्हां पुन्हां नस्कार करतों. जो प्राणी आमचा द्वेष करतो आणि आम्ही ज्याचा द्वेष करतों त्याला आम्ही प्रभूच्या स्वाधीन करतों.

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजीरक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ २ ॥

इन्द्र अर्थात् शक्तिशाली ईश्वर दक्षिण की दिशा का स्वामी है। वह कीट पतंग वृश्चिक आदि तिर्यक् योनिवालों से रक्षा करने वाला है, जिसकी सृष्टि में ज्ञानी लोग बाण के समान हैं। इन सब गुणों के अधिपति ईश्वर के रक्षक गुणों को और उसके बनाये हुये रक्षक पदार्थों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो प्राणी हमसे द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं उसे हम प्रभु के न्यायाधीन करते हैं।

इन्द्र अर्थात् शक्तिशाली ईश्वर दक्षिण दिशेचा स्वामी आहे. तोच वृश्चिकादि दंशक प्राण्यांपासून रक्षण करणारा आहे. त्याच्या सृष्टींत ज्ञानी पुरुष बाणासारखे आहेत. त्या सर्व गुणांच्या अधिपतिभूत ईश्वराच्या रक्षक गुणांना आणि त्यानें निर्माण केलेल्या रक्षक पदार्थांना आम्ही वारंवार नमस्कार करतों. जो प्राणी आमचा द्वेष करतो आणि आम्ही ज्याचा द्वेष करतों त्याला आम्ही प्रभूच्या स्वाधीन करतों.

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकूरक्षिताऽन्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ ३ ॥

वरुण अर्थात् सबसे उत्तम, सबका राजा परमेश्वर पश्चिम की दिशा का स्वामी है। वह बड़े बड़े अजगर सर्पादि विषधारी प्राणियों से रक्षा करने वाला है, जिसके अन्न अर्थात् पृथिव्यादि पदार्थ बाणों के समान हैं। इन सब गुणों के अधिपति ईश्वर के रक्षक गुणों को और उसके बनाये हुए रक्षक पदार्थों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो प्राणी हम से द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं उसे हम प्रभु के न्यायाधीन करते हैं।

वरुण अर्थात् सर्वांत उत्तम, सर्वांचा राजा परमेश्वर पश्चिम दिशेचा स्वामी आहे. तो मोठमोठ्या अजगर सर्पादि विषधर प्राण्यांपासून रक्षण करणारा आहे. ज्याचें अन्न अर्थात् पृथिव्यादि पदार्थ बाण आहेत. ह्या सर्व गुणांचे अधिपतिभूत ईश्वराच्या रक्षक गुणांना आणि त्यानें निर्माण केलेल्या रक्षक पदार्थांना आम्ही वारंवार नमस्कार करतों. जो प्राणी आमचा द्वेष करतो आणि आम्ही ज्याचा द्वेष करतों, त्याला आम्ही प्रभूच्या स्वाधीन करतों.

उदीची दिक्सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिता शनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ ४ ॥

सोम अर्थात् शान्ति का धाम, सब जगत् का उत्पन्न करने वाला ईश्वर उत्तर की दिशा का स्वामी है, जो स्वयंभू और भली भांति रक्षा करने वाला है, जिसके बाण विद्युत् हैं। इन सब गुणों के अधिपति ईश्वर के रक्षक गुणों को और उसके बनाये हुए रक्षक पदार्थों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो प्राणी हम से द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं उसे हम प्रभु के न्यायाधीन करते हैं।

सोम, अर्थात् शान्तीचें स्थान, सर्व जगाला उत्पन्न करणारा ईश्वर, उत्तर दिशेचा स्वामी आहे. तो स्वयंभू आणि व्यवस्थित प्रकारें रक्षण करणारा आहे. त्याचा बाण विद्युत् आहे. त्या सर्व गुणांचा अधिपतिभूत ईश्वराच्या रक्षक गुणांना आणि त्यानें निर्माण केलेल्या रक्षक पदार्थांना आम्ही वारंवार नमस्कार करतों. जो प्राणी आमचा द्वेष करतो आणि आम्ही ज्याचा द्वेष करतों, त्याला आम्ही प्रभूच्या स्वाधीन करतों.

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ५॥

विष्णु अर्थात् सर्वव्यापक परमात्मा नीचे की दिशा का स्वामी है। हरित रंग वाले वृक्षादि ग्रीवा के समान हैं और जिसके बाण के समान सब वनस्पतियां हैं। उस गुणों के केन्द्र ईश्वर के रक्षक गुणों को और उसके बनाये हुए रक्षक पदार्थों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो प्राणी हमसे द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं उसे हम प्रभु के न्यायाधीन करते हैं।

विष्णु अर्थात् सर्व व्यापक परमेश्वर खालच्या दिशेचा स्वामी आहे. हिरव्या रंगाचे वृक्षादि ग्रीवेसारखे आहेत. आणि त्याचे बाण सगळ्या वनस्पति आहेत. ह्या सर्व गुणांचे अधिपतिभूत ईश्वराच्या रक्षक गुणांना आणि त्यानें निर्माण केलेल्या रक्षक पदार्थांना आम्ही वारंवार नमस्कार करतों. जो प्राणी आमचा द्वेष करतो आणि आम्ही ज्याचा द्वेष करतों, त्याला आम्ही प्रभूच्या स्वाधीन करतों.

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।

बृहस्पति अर्थात् बृहत् लोकों और वाणी का जो स्वामी है, वह परमेश्वर ऊपर की दिशा का अधिपति है। जिस के बाण के समान वर्षा की बुंदें हैं। उस गुणों के केन्द्र ईश्वर के रक्षक गुणों को और उसके बनाये हुए रक्षक पदार्थों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो प्राणी हमसे द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं उसे हम प्रभु के न्यायाधीन करते हैं।

बृहस्पति अर्थात् बृहत् लोकांचा आणि वाणींचा जो स्वामी आहे, तो प्रभू वरच्या दिशेचा अधिपति आहे. पावसाचे थेंब त्याचे बाण आहेत. त्या सर्व गुणांच्या अधिपतिभूत ईश्वराच्या रक्षक गुणांना आणि त्यानें निर्माण केलेल्या रक्षक पदार्थांना आम्ही वारंवार नमस्कार करतों. जो प्राणी आमचा द्वेष करतो आणि आम्ही ज्याचा द्वेष करतों, त्याला आम्ही प्रभूच्या स्वाधीन करतों

उपस्थानमंत्राः

उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्।

यजुः० ३५--१४

अन्धकार से पृथक्, प्रकाशस्वरूप, प्रलय के पीछे सदा वर्तमान, देवों में भी देव अर्थात् प्रकाश करने वालों में भी प्रकाशक, चराचर के आत्मा सर्वोत्तम ज्ञानस्वरूप प्रभु को हम प्राप्त हों।

अंधकारापासून अलिप्त, प्रकाशस्वरूप, प्रलयानन्तरही सदैव असणारा, देवांत देव, अर्थात् प्रकाश देणाऱ्यांत सुद्धां प्रकाशक, चराचराचा आत्मा, सर्वोत्तम ज्ञानस्वरूप प्रभू आम्हास प्राप्त होवो.

उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम ।

यजुः० ३३—३१

जिससे ऋग्वेदादि चार वेद प्रसिद्ध हुए हैं, जो दिव्य गुणवाला और सब जीवादि जगत का प्रकाशक है, जिस को केतु अर्थात् वेद और जगत के पृथक् पृथक् रचनादि नियामक गुण प्रकाशित कर रहे हैं उस परमात्मा का विश्वविद्या की प्राप्ति के लिए हम लोग ध्यान करते हैं ।

ज्यापासून ऋग्वेदादि चार वेद प्रसिद्ध झाले, जो दिव्यगुणयुक्त आणि सर्व जीवादि जगाचा प्रकाशक आहे, ज्याला केतु अर्थात् वेद आणि जगाचे वेगळे वेगळे रचनादि नियामक गुण प्रकाशित करीत आहेत, त्या परमेश्वराचे (सृष्टिज्ञानाच्या प्राप्तीसाठीं) प्राप्तीकरितां आम्ही लोक ध्यान करीत आहोंत.

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्राद्यावा पृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगत-स्तस्थुषश्च स्वाहा।

यजुः० ७—४२

जो देवताओं का भी अद्भुत बल है; जो मित्र (सूर्य), वरुण, तथा अग्नि का प्रकाश करने वाला है; जो द्युलोक, पृथिवी तथा अन्तरिक्ष में भरपूर हो रहा है, जो जड़ एवं जंगम जगत् का आत्मा है, वह प्रभु हमारे हृदयों में प्रकाशित रहे।

ज्याच्यांत देवतांचें अद्भुत बळ आहे; जो मित्र (सूर्य) वरुण आणि अग्नीला प्रकाश देणारा आहे; जो द्युलोक, पृथिवी आणि अन्तरिक्षांत भरून राहिला आहे, जो जड तसेंच चेतन जगाचा आत्मा आहे तो प्रभु आमच्या हृदयांत प्रकाशमान असो.

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।

यजुः० ३६—२४

जो ब्रह्म सब का द्रष्टा, विद्वानों का परम हितकारक, जो सृष्टि के पूर्व, पश्चात् तथा मध्य में शुद्ध सत्यस्वरूप से वर्तमान रहता है, उसी ब्रह्म की कृपा से हम लोग सौ वर्ष तक देखें, जीवें, सुनें, उसी ब्रह्म का उपदेश करें और उसकी कृपा से किसी के आधीन न रहें। उसी प्रभु की कृपा से सौ वर्ष के उपरान्त भी हम लोग सुखी और स्वतंत्र रहें।

परमेश्वर हा सर्वसाक्षी, पवित्र, सनातन आणि सज्जनांचा भोक्ता आहे. त्याच्या कृपेनें आम्ही वाक्, चक्षु, श्रोत्र इत्यादि इंद्रियांनी युक्त असे स्वतंत्र व समर्थ शतायुषी होऊं.

गायत्रीमंत्रः

ॐ भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।

यजु० ३६—३

ईश्वर सब की सत्ता का कारण, ज्ञानस्वरूप और आनन्दमय है। उसी विश्व के उत्पादक, दिव्य गुणधारी प्रभु के श्रेष्ठ तेज का हम लोग ध्यान करते हैं। वह प्रभु हमारी बुद्धि को उत्तम कामों में प्रवृत्त करे।

परमेश्वर हा स्वयंभू, सर्वज्ञ आणि सदानंद स्वरूप आहे. त्या अति पवित्र अशा सृष्टिकर्त्याचें आम्ही ध्यान करतों. तो आमच्या बुद्धीस सन्मार्ग दाखवो!

नमस्कारमंत्रः

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।

यजु० १६-४१

जो सुखस्वरूप, संसार के उत्तम सुखों को देने वाला, कल्याण-कर्त्ता, मोक्षस्वरूप, अपने भक्तों को सुख देने वाला और धर्मकार्यों में युक्त करने वाला, अत्यन्त मङ्गलरूप, मोक्षसुख का प्रदाता है, उस प्रभु को हमारा बारंबार नमस्कार हो।

त्या सुखरूप आणि सुखद, शांतिरूप आणि शांतिदायक, शिव आणि शिवकारक अशा परमेश्वरास आमचें वंदन असो!

II. THE VEDAS

(a) On the nature of God

— i —

God is one, with many names

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुः
अथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति
अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः॥ १॥

ऋ० १-१६४-२२

वह एक है, परन्तु विद्वान् पुरुष अनेक प्रकार के नामों से उसका वर्णन करते हैं। उसको इन्द्र, मित्र, वरुण और अग्नि के नाम से पुकारते हैं। वही दिव्य सुपर्ण गरुत्मान् है। उसी अग्नि रूप प्रभु को यम और मातरिश्वा कहते हैं।

तो एक आहे, परन्तु विद्वान् पुरुष अनेक प्रकारें त्याचें वर्णन करितात. त्याचें इन्द्र, मित्र, वरुण आणि अग्नि ह्या नांवानें आवाहन करितात. तोच दिव्य सुपर्ण, गरुत्मान् आहे. त्याच अग्निरूप प्रभूला यम आणि मातरिश्वा म्हणतात.

तदेवाग्निस्तदादित्यस्, तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म, ता आपः स प्रजापतिः॥ २॥

यजु० ३२—१

वही अग्नि है, वही आदित्य है, वही वायु है, वही चन्द्रमा है, वही शुक्र है, वही ब्रह्म है, वही अप् (सर्वव्यापक) और वही प्रजापति है।

जो प्रजापति आहे तोच अग्नि आहे, तोच आदित्य आहे, तोच वायु आहे, तोच चन्द्रमा आहे, तोच शुक्र आहे, तोच ब्रह्म आहे, तोच आप (सर्वव्यापक) आणि तोच प्रजापति आहे.

— ii —

God regarded as Cosmic Person, animating the whole world

यस्य भूमिः प्रमा अन्तरिक्षमुतोदरम् ।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥३॥

अथर्व १०-७-३२

भूमि जिसका पैर है और अन्तरिक्ष उदर है; द्युलोक को जिसने अपना सिर बनाया है, उस महान् ब्रह्म को हमारा प्रणाम है ।

पृथ्वी हा ज्याचा पाय आहे, अन्तरिक्ष हें ज्याचें उदर आहे; स्वर्गलोकास (द्युलोक) ज्यानें आपलें मस्तक कल्पिलें आहे, त्या महान् ब्रह्माला आमचा प्रणाम असो.

यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः ।
अग्निं यश्चक्र आस्यं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः॥४॥

अथर्व १०-७-३३

सूर्य और बार बार नया होने वाला चन्द्रमा जिसका नेत्र है, अग्नि को जिस ने अपना मुख बनाया है, उस परम ब्रह्म को हमारा प्रणाम है ।

सूर्य आणि पुनः पुनः नवीन होणारा चन्द्रमा ज्याचा डोळा आहे, अग्नि ज्याचें मुख बनविलें आहे, त्या परम ब्रह्माला आमचा प्रणाम असो.

यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरङ्गिरसोभवन्।
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय
ब्रह्मणे नमः ॥ ५ ॥

अथर्व १०–७–३४

वायु जिस का श्वास और प्रश्वास है, आङ्गिरस (प्रकाशमान किरणावली) जिसका नेत्र है, दिशाओं को जिसने ज्ञान का साधक (श्रोत्र) बनाया है उस परम ब्रह्म को हमारा प्रणाम है।

वायु ज्याचा श्वासोच्छ्वास आहे, अङ्गिरस ज्याचा डोळा आहे, दिशांना ज्यानें ज्ञानाचें साधक (श्रोत्र) बनविलें आहे, त्या परम ब्रह्माला आमचा प्रणाम असो.

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥ ६ ॥

अथर्व १०-८-१

जो भूत और भविष्य सब का अधिष्ठाता है, जिसका अपना स्वरूप केवल प्रकाश और आनन्द है उस महान् ब्रह्म को हमारा प्रणाम है।

जो भूत आणि भविष्य सर्वांचा अधिष्ठाता आहे, ज्याचें स्वतःचें रूप फक्त प्रकाश आणि आनन्द आहे, त्या महान् ब्रह्माला आमचा प्रणाम असो.

—iii—

God is all-knowing

यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति
यो निलायं चरति यः प्रतङ्कम् ।
द्वौ संनिषद्य यन्मंत्रयेते
राजा तद्वेद वरुणस्तृतीयः ॥ ७ ॥

अथर्व ४–१६–२

जो मनुष्य बैठा है या चलता है, जो दूसरों को ठगता है, जो छिप कर कुछ काम करता है, जो दूसरों पर अत्याचार करता है और दो आदमी मिल कर जो कुछ गुप्त मंत्रणा करते हैं इन सब को तीसरा सर्वश्रेष्ठ राजा परमेश्वर जानता है ।

जो मनुष्य बसला आहे अथवा चालत आहे, जो दुसऱ्यांना ठकवितो, जो लपून कांहीं काम करतो, जो दुसऱ्यांवर अत्याचार करतो आणि दोन माणसें मिळून जी कांहीं गुप्त मसलत करितात त्या सर्वांचा तिसरा सर्व श्रेष्ठ राजा परमेश्वर साक्षी असतो.

— iv —

The Lord Whom we adore

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे
भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ८ ॥

ऋ० १०–१२१–१

प्रकाशस्वरूप प्रभु सृष्टि के पहले वर्तमान था और वह इस उत्पन्न हुए विश्व का एकमात्र प्रसिद्ध स्वामी था। उसीने इस द्युलोक और पृथिवी को धारण किया हुआ है। उस सुख-स्वरूप देव का हम त्याग द्वारा पूजन करते हैं।

प्रकाशस्वरूप प्रभु सृष्टीच्या अगोदर स्थित होता आणि तो ह्या उत्पन्न झालेल्या विश्वाचा एकटाच प्रसिद्ध स्वामी होता. तो ह्या द्युलोकाचा चालक आहे त्या सुखस्वरूप देवाचें आम्ही त्यागानें पूजन करीत आहों.

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व
उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ६ ॥

ऋ० १०–१२१–१

जो आत्मिक शक्ति और बल देने वाला है, सब जिसकी उपासना करते हैं, देव जिसकी आज्ञा में चलते हैं, जिसकी छाया अथवा शरण पाना अमर होना है और जिससे दूर होना ही मृत्यु है, अथवा जो मृत्यु का भी अधिष्ठाता है, उस सुख-स्वरूप देव का हम त्याग द्वारा पूजन करते हैं।

जो आत्मिक शक्ति देणारा आहे, ज्याची सर्व उपासना करतात, देव ज्याच्या आज्ञेंत राहतात, ज्याचा आश्रय घेणें किंवा ज्याला शरण जाणें अमर होण्यासारखें आहे आणि ज्यापासून दूर होणें मृत्यु आहे, अथवा जो मृत्यूचा सुद्धां अधिष्ठाता आहे, त्या सुखस्वरूप देवाचें आम्ही त्यागद्वारा पूजन करीत आहों.

य: प्राणतो निमिषतो महित्वैक
इद्राजा जगतो बभव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १० ॥

ऋ० १०-१२१-३

जो अपने महत्त्व के कारण इस जड़ एवं जंगम जगत् का निश्चयरूप से एक मात्र राजा है, जो इस विश्व के द्विपद एवं, चतुष्पद् सभी पर शासन करता है, उस सुखस्वरूप देव का हम त्याग द्वारा पूजन करते हैं।

जो अंगच्या सर्वश्रेष्ठतेमुळें चराचर सृष्टीचा एकमेव सम्राट् आहे, जो ह्या संपूर्ण विश्वांतील द्विपाद व चतुष्पाद सर्व प्राण्यांवर शासन करीत आहे त्या सुखस्वरुप देवाचें आम्ही नम्रभावानें पूजन करितों.

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा
येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
योऽन्तरिक्षे रजसो विमानः
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ११ ॥

ऋ० १०-१२१-५

जिसने उग्र द्युलोक और दृढ़ पृथिवी को धारण किया है, जिसने स्वः (स्वर्लोक अथवा सुख) और मोक्ष को धारण किया है, जो अन्तरिक्ष में लोक लोकान्तरों को घुमाता हुआ धारण कर रहा है, उस सुखस्वरूप देव का हम त्याग द्वारा पूजन करते हैं।

जो उग्र द्युलोक आणि दृढ पृथ्वीचा चालक आहे. स्वर्ग (स्वर्लोक अथवा सुख) आणि मोक्ष ज्याच्या पायाशीं आहेत, जो अन्त-रिक्षामध्यें लोकलोकान्तरांना फिरवीत असून त्याचा शास्ता आहे त्या सुखस्वरूप देवाचें आम्ही त्याग द्वारा पूजन करीत आहों.

(b) Social well-being

— i —

Be ye united and organised

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः
समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि ।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्य-
तारा नाभिमिवाभितः ॥ १२ ॥

अथर्व ३–३०–६

तुम्हारी जलशाला एकसी हो, अन्न का विभाजन साथ साथ हो, एक ही जुए में मैं तुम को साथ साथ जोड़ता हूँ । जैसे पहिए के अरे नाभि में चारों ओर से जुड़े होते हैं वैसे ही तुम सब मिल कर ज्ञानस्वरूप प्रभु का पूजन करो ।

तुमचा अन्नपानादि व्यवहार अविषम असो. तुम्हां सर्वांस मीं एकाच धुरेस जोडलें आहे. ज्याप्रमाणें चाकाचे आरे नाभीशीं संयुक्त असतात त्याचप्रमाणें तुम्ही सर्व मिळून ज्ञान स्वरूप प्रभूशीं भक्तिद्वारा संयुक्त असावें !

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥ १३ ॥

ऋ० १०–१९१–२

आपस में मिलो, संवाद करो, तुम्हारे मन एक ज्ञान वाले हों; जैसा कि पहले देवता (सूर्य चन्द्रादि) एक मन होकर अपने अपने भाग का सेवन कर रहे हैं अर्थात् अपना कर्तव्य करते हुए विश्व की स्थिति के कारण बने हुए हैं।

त्याप्रमाणें आपसांत मिळून मिसळून ऐक्यानें चाला, गोडी-गुलाबीनें एकमेकाशीं संवाद करा, यायोगें तुमचीं मनें एकाच ज्ञानाला अनुकूल होवोत. याप्रमाणें (सूर्य चन्द्रादि) आद्य दैवतें एका मनानें आपआपल्या भागाचें सेवन करीत आहेत अर्थात् आपलें कर्तव्य करीत आहेत म्हणूनच विश्वाच्या स्थितीचें कारण झालीं आहेत.

— ii —

Good Company

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि ॥ १४ ॥

ऋ० ५-५१-१५

सूर्य और चन्द्र की भाँति हम कल्याणकारी मार्ग पर चलें और दानी, अहिंसक तथा विद्वान् पुरुषों का साथ करें ।

आम्हीं चंद्रसूर्यांप्रमाणें कल्याणप्रद मार्गानें जावें. उदार, सकरुण, आणि ज्ञानी पुरुषांची संगत आम्हांस लाभावी.

सूर्यचन्द्राप्रमाणें आम्हीं कल्याणकारी मार्गावर चालावें आणि दानी, अहिंसक तसेंच विद्वान् पुरुषांचें सहकार्य करावें.

— iii —

Universal Goodwill

दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा
सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥ १५॥

यजु० ३६–१८

हे दृढ़ बनाने वाले ! मुझे ऐसा दृढ़ बना कि सब प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें। मैं स्वयं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखता हूं (और चाहता हूं कि) हम सब आपस में एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें।

हे बलदायका, मला असा दृढ बनव कीं सर्व प्राणी मजकडे मित्र दृष्टीनें पाहोत. मी स्वतः सर्व प्राण्यांकडे मित्राच्या दृष्टीनें पाहतों (आणि इच्छितों कीं) आम्ही सर्वांनीं एकमेकांकडे मित्राच्या दृष्टीनें पहावें.

— iv —

Fearlessness

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं
द्यावा पृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्ताद्
उत्तरादधरादभयं नोऽस्तु ॥ १६ ॥

अथर्व १९-१५-५

अन्तरिक्ष में हमारे लिए अभय हो, इन दोनों द्यौ और पृथिवी में अभय हो; अभय पीछे से हो; आगे से हो; ऊपर और नीचे से हमारे लिए अभय हो।

अन्तरिक्षांत आम्हांला अभय असो. ह्या द्यावापृथ्वींत अभय असो. मागच्या बाजूनें व समोरून, वर आणि खालीं आम्हांस सर्वत्र अभय असो.

अभयं मित्रादभयममित्रा-
दभयं ज्ञातादभयं पुरो यः।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः
सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥ १७॥

अथर्व १९-१५-६

हम मित्रों से अभय हों, शत्रुओं से अभय हों, जाने हुए परिचितों से अभय हों और जो आगे आनेवाले हैं, अपरिचित हैं उनमें भी अभय हों; रात्रि और दिन में हम निर्भय रहें। समस्त दिशायें हमारे मित्र रूप में हों।

मित्राकडून व अमित्राकडून आम्हाला अभय असावें, सुपरिचितापासून व अपरिचितापासून अभय असावें. रात्रीं आणि दिवसा आम्हीं निर्भय असावें. सर्व दिशा आम्हास मित्ररूप व्हाव्यात.

(c) Individual Welfare

— i —

Religion in Practice

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥१८॥

यजु० ४०-१

इस चलायमान संसार में जो कुछ चलता हुआ है वह सब ईश्वर से आच्छादित है। इसलिए त्याग-भाव से भोग करो और किसी के भी धन की लालच मत करो।

या चरसृष्टींत जेवढें म्हणून चर आहे तें सर्व ईशव्याप्त आहे. म्हणून, परधनाचा मोह न धरतां, भोग्यवस्तूंचा त्यागभावानें उपभोग घ्या.

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥१६॥

यजु० ४०-२

इस संसार में कर्म करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा करो। तभी तुमसे कर्म का लगाव छूट सकेगा। कर्मबन्धन से छूटने का इसके अतिरिक्त अन्य उपाय नहीं है।

ह्या संसारांत कर्म करीत शतायुषी होण्याची इच्छा करा. तेव्हांच तुमचें कर्मबंधन सुटूं शकेल, कर्मबंधनापासून अलिप्त राहण्याचा या व्यतिरिक्त अन्य उपाय नाहीं.

असुर्य्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः
तांस्ते प्रेत्याभि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥ २० ॥

यजु० ४०-३

जो आत्मघात करने वाले पुरुष हैं वे यहां से शरीर छोड़ कर उन लोकों में जाते हैं जो प्रगाढ़ अन्धकार से भरे हुए हैं और असुरों के योग्य हैं ।

जे आत्मघात करतात ते मरणान्तीं लोकान्तरीं जातात. ते लोक प्रगाढ अन्धकारानें भरलेले आहेत आणि असुरांच्या योग्य आहेत.

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥ २१ ॥

यजु० ४०-६

जो आत्मा में समस्त प्राणियों को और समस्त प्राणियों में आत्मा को अनुभव करता है वह किसी से घृणा नहीं करता।

जो आपल्या ठिकाणीं सर्व प्राण्यांना आणि सर्व प्राण्यांत स्वतःला पाहतो तो कोणाचाही तिरस्कार करीत नाहीं.

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः ॥ २२ ॥

यजु० ४०–७

जिस अवस्था में एकता का दर्शन करने वाले ज्ञानी पुरुष को सब प्राणियों में आत्मतत्त्व ही प्रतीत होने लगता है, उस अवस्था में उसे मोह और शोक नहीं रहता।

एकतेचें दर्शन करणाऱ्या ज्ञानी पुरुषाला सर्व प्राण्यांत आत्म-तत्त्वच प्रतीत होऊं लागतें. त्या अवस्थेंत त्याला मोह आणि शोक रहात नाहीं.

— ii —

Sambhuti and Asambhuti

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याꣳरताः ॥ १३ ॥

यजु० ४०–९

जो केवल असम्भूति की उपासना करते हैं वे घोर अंधकार में प्रवेश करते हैं, किन्तु जो सम्भूति के पीछे लगे हुए हैं वे उनसे भी बढ़ कर घने अन्धकार को प्राप्त करते हैं।

जे केवळ असम्भुतीची उपासना करतात ते घोर अन्धकारांत प्रवेश करतात, परन्तु जे सम्भूतीच्याच मागें लागलेले आहेत ते त्याच्याहून गाढ अन्धकाराला प्राप्त होतात.

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् ।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥ २४

यजु० ४०-१०

सम्भूति और असम्भूति दोनों के भिन्न भिन्न फल हैं—ऐसा हमने उन तत्त्वदर्शियों से सुना है जिन्होंने हमें इसका रहस्य बतलाया है ।

सम्भूति आणि असम्भूति दोहोंची निरनिराळीं फळें आहेत असें आम्हीं त्या तत्त्वदर्शी लोकांकडून ऐकलें आहे. त्यांनीं आम्हाला याचें रहस्य सांगितलें आहे.

सम्भूतिञ्च विनाशञ्च यस्तद्वेदोभयँ सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते ॥ २५ ॥

यजु० ४०–११

सम्भूति और असम्भूति (विनाश) दोनों को जो साथ साथ जानता है, वह विनाश से मृत्यु को तर कर सम्भूति से अमृत को प्राप्त करता है।

सम्भूति आणि विनाश हीं दोन्हीं जो एकत्वानें पाहतो तो मृत्यूला विशानें जिंकून नासम्भूतीनें अमर होतो.

— iii —

Knowledge and Non-Knowledge

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाᳬंरताः ॥ २६ ॥

यजु० ४०-१२

जो ज्ञानविहीन कर्मकाण्ड-रूप अविद्या की उपासना करते हैं वे घने अंधकार में प्रवेश करते हैं; किन्तु जो केवल विद्या में लगे हुए हैं, वे उनसे भी बढ़ कर अन्धकर को प्राप्त करते हैं।

जे ज्ञानविहीन कर्मकाण्डरूप अविद्येची उपासना करतात ते घोर अन्धकारांत प्रवेश करतात परन्तु जे केवळ विद्येंत गुंतलेले आहेत ते त्यांच्याहून जास्त अंधकाराला प्राप्त होतात.

अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ॥ २७॥

यजु० ४०-१३

अविद्या और विद्या दोनों के भिन्न भिन्न फल हैं—ऐसा उन तत्त्वदर्शियों से सुना है, जिन्हों ने हमें यह रहस्य बतलाया है।

अविद्या आणि विद्या ह्या दोहोंचीं निरनिराळीं फळें आहेत असें ज्या तत्त्वदर्शी पुरुषांकडून ऐकलें आहे, त्यांनीं आम्हाला हें रहस्य सांगितलें आहे.

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभय ँ सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥ २८ ॥

यजु० ४०-१४

विद्या और अविद्या दोनों में जो एक साथ जानता है—ज्ञानकाण्ड, और कर्मकाण्ड दोनों में एक साथ निरत होता है—वह अविद्या से जो कर्मकाण्ड है, मृत्यु को तर कर विद्या से, ज्ञानकाण्ड से, मोक्ष को प्राप्त होता है।

विद्या आणि अविद्या दोहोंस जो अभिन्नतेनें ओळखतो (ज्ञान आणि कर्म यांचा एकाच वेळीं जो अनुभव घेतो) तो अविद्येनें मृत्यूच्या पार व विद्येनें मोक्षाला प्राप्त होतो.

— iv —

Noble Resolves and Aspirations

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं
तदु सुप्तस्य तथैवैति
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २६ ॥

यजु० ३४–१

जो दिव्य मन जाग्रत अवस्था में दूर निकल जाता है और उसी प्रकार सोने की दशा में भी बहुत दूर चला जाता है, वह दूर जाने वाला, ज्योतियों की ज्योति अर्थात् इन्द्रियों का प्रकाशक मेरा मन शुभ सकल्पोंवाला हो।

जें दिव्य मन जागृत अवस्थेंत व सुषुप्तींत दूर निघून जातें तें दूर निघून जाणारें, ज्योतीची ज्योत अर्थात् इन्द्रियांचा प्रकाश असलेलें माझें मन शिवसंकल्प करणारें होवो.

येन कर्मारायपसो मनीषिरागो
यज्ञे कृरावन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तःप्रजानां
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ३० ॥

यजु० ३४–२

कर्मशील, मनीषी, धीरपुरुष जिसके द्वारा परोपकार–क्षेत्र में तथा जीवन–संघर्ष में बड़े बड़े कार्य कर दिखाते हैं, जो समस्त प्रजाओं (इन्द्रियों) के अन्दर एक अपूर्व पूज्य सत्ता है, वह मेरा मन शुभ संकल्पोंवाला हो।

कर्मशील, मनीषी, धीर पुरुष ज्याच्या सहाय्यानें परोपकार क्षेत्रांत तसेंच जीवन संघर्षांत मोठमोठीं कामें करून दाखवितात, जें सर्व प्रजाजनांत (इन्द्रियांत) एक अपूर्व तशीच पूज्य सत्ता आहे तें माझें मन शिवसंकल्प करणारें होवो.

४९

यत्प्रज्ञानमुत चेतोधृतिश्च
यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥३१॥

यजु० ३४–३

जो नये नये अनुभव कराता है, पिछले जाने हुए का स्मरण कराता है, संकट में धैर्य धारण कराता है; जो समस्त प्रजाओं (इन्द्रियों) के अन्दर एक अमर ज्योति है, जिस के बिना कोई कर्म नहीं किया जाता, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

जो प्रज्ञावंत आहे, चैतन्यमय आहे, धृतिदायक आहे, जो अमर-ज्योतिरूप आहे, ज्यावांचून कोणतेंहि कर्म शक्य नाहीं, असें माझें मन शिवसंकल्प करणारें होवो !

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्
परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येत यज्ञस्तायते सप्त होता
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥३३॥

यजु० ३४-४

जिस अमृत मन के द्वारा यह भूत, भविष्यत् तथा वर्तमान सभी जाना जाता है, जिससे सात होताओं वाला यज्ञ फैलाया जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ज्या अमृत मनानें हें भूत, भविष्य आणि वर्तमान सर्व ओळखलें जातें ज्या मनानें सप्त-होत्यांकडून यज्ञाची यथासांग समाप्ति होते तें माझें मन शिवसंकल्प करणारें होवो.

यस्मिन्नृचः सामयजू ँ षि यस्मिन्
प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानां
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥३३॥

यजु० ३४–५

जिसमें ऋचायें, साम और यजु इस प्रकार टिके हुए हैं जैसे रथ की नाभि में आरे, जिसमें इन्द्रियों की सारी प्रवृत्ति पिरोई रहती है, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

ज्याच्यांत ऋचा, साम आणि यजु रथचक्रांतील नाभीशीं ज्याप्रमाणें आरे संयुक्त असतात त्याप्रमाणें आहेत. ज्याच्यांत इन्द्रियांची सर्व प्रवृत्ति केंद्रित असते तें माझें मन शिवसंकल्प करणारें होवो.

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्
नेनीयतेऽभीषुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥३४॥

यजु० ३४-६

अच्छा सारथी जिस प्रकार वेगवान घोडों को बागों से पकड़ कर चलाये जाता है, उसी प्रकार जो मनुष्यों को लगातार चलाता रहता है, जो हृदय में रहने वाला, बड़ा फुर्तीला और सर्वाधिक वेग वाला है, वह मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

चांगला सारथी ज्याप्रमाणें वेगानें धांवणाऱ्या घोडयांचें लगामाच्या सहाय्यानें नियंत्रण करतो तशाच प्रकारें जें मनुष्याचें निरंतर नियंत्रण करतें, जें अंतर्यामीं आहे, जें फार चंचल आणि सर्वांपेक्षां अधिक वेगवान् आहे, तें माझें मन शिवसंकल्प करणारें होवो.

— v —

Right guidance of Reason and the quest of Wisdom

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधया अग्ने मेधाविनं कुरु ॥३५॥

यजु० ३२–१४

हे ज्ञानस्वरूप प्रभो ! पितर और देवगण जिस धारणा-वती बुद्धि की उपासना करते हैं उस से आज मुझे मेधावी बना दो ।

हे ज्ञानस्वरूप प्रभो ! पितर आणि देवगण ज्या धारणावती बुद्धीची उपासना करतात तिच्या दानानें मला मेधावी कर.

मेधां सायं मेधां प्रातः मेधां मध्यन्दिनं परि ।
मेधां सूर्यस्य रश्मिभिः वचसा वेशयामहे ॥३६॥

अथर्व ६-१०८-५

मेधा को सायं, प्रातः, मध्यदिन के समय, सूर्य की रश्मियों के साथ और वचन के साथ हम ग्रहण करते हैं।

या बुद्धीचें ग्रहण आम्ही सतत सायंप्रातर्मध्यान्हीं, सूर्याच्या प्रत्येक किरणाबरोबर व प्रत्येक शब्दोच्चारासह करीत आहों.

— vi —

Life of Self-abnegation

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्, प्राणो यज्ञेन कल्पताम्,
चक्षुर्यज्ञेन कल्पताम्, श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताम्,
मनो यज्ञेन कल्पताम्, आत्मा यज्ञेन कल्पताम,
ब्रह्मा यज्ञेन कल्पताम्, ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताम्,
स्वर्यज्ञेन कल्पताम्, पृष्ठं यज्ञेन कल्पताम्,
यज्ञो यज्ञेन कल्पताम् । स्तोमश्च यजुश्च ऋक्च
साम च वृहच्च रथन्तरञ्च । स्वर्देवा अगन्मामृता
अभूम प्रजापतेः प्रजा अभूम वेट् स्वाहा ॥३७॥

यजुः० १८–२९

मेरी आयु, प्राण, चक्षु श्रोत्र, मन और आत्मा श्रेष्ठतम पुण्यकर्म के लिए समर्पित हों। मेरा वैदिक ज्ञान, प्रतिभा, सुख और मेरा जाना हुआ परोपकार के लिए समर्पित हों। मेरा यज्ञ यज्ञ–रूप प्रभु के लिए समर्पित हो। अथर्व, ऋक्, यजु, साम और वृहत् रथन्तर सब यज्ञ के लिए हैं। (इन्हीं याज्ञिक कर्मों से) देवताओं ने सुख प्राप्त किया, वे अमर हुए और प्रजापति की प्रजा बने। मैं भी इस कल्याणकर्म के लिए अपने को समर्पित करता हूँ।

माझें जीवित, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, मन, आत्मा, ज्ञान, प्रतिभा, हीं सर्व ब्रह्मार्पण असोत! यज्ञ हाहि यज्ञार्पणच होवो! ऋक्, यजु, साम आणि अथर्व हे चार वेद व त्यांचीं वेदांगेंहि ब्रह्मार्पण करून जसे सज्जन सुखी व अमर झाले तसाच मीहि होईन.

— vii —

Keep awake and alert

यो जागार तमृचः कामयन्ते
यो जागार तमु सामानि यन्ति ।
यो जागार तमयं सोम आह
तवाहमस्मि सख्ये न्योकः ॥ ३८॥

यजुः० ५–४४–१४

जो जागता है उसे ऋचायें चाहती हैं, जो जागता हैं उसे साम प्राप्त होते हैं, जो जागता है उसे यह सोम कहता है:—"मैं तेरा हूँ। तेरी मित्रता में ही मेरा निवास है—तू मुझे जहाँ बुलावेगा मैं वहीं पहुँच जाऊँगा।"

जो जागतो तो ऋचांना प्रिय असतो, जो जागतो त्याला साम प्राप्त होतात, जो जागतो त्याला हा सोम म्हणतो कीं मी तुझा आहें, तुझी मैत्री हेंच माझें निवासस्थान आहे. तूं मला जेथें बोलवशील तेथें मी येईन.

— viii —

The path of Progress

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥३६॥

यजुः० १९–३०

व्रत से दीक्षा, दीक्षा से दक्षिणा (योग्यता, निपुणता), दक्षिणा से श्रद्धा और श्रद्धा से सत्य प्राप्त किया जाता है।

व्रतानें दीक्षा, दीक्षेनें दाक्षिण्य (योग्यता, निपुणता), दाक्षिण्यानें श्रद्धा आणि श्रद्धेनें सत्य प्राप्त होतें.

— ix —

Energy and Control

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि । वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि । बलमसि बलं मयि धेहि । ओजोऽसि ओजो मयि धेहि । मन्युरसि मन्युं मयि धेहि । सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥४०॥

यजुः० १९–९

प्रभु तू तेज है, मेरे अन्दर तेज स्थापित कर। तूं वीर्य (जीवनी शक्ति) है, मेरे अन्दर जीवनी शक्ति स्थापित कर। तू बल है, मेरे अन्दर बल की स्थापना कर। तू ओज है, मेरे अन्दर ओज स्थापित कर। तू पवित्र क्रोध है, मेरे अन्दर भी इसे स्थापित कर। तू सहन शक्ति है, मेरे अन्दर भी सहनशक्ति की स्थापना कर।

प्रभु तूं तेज आहेस, माझ्यांत तेज स्थापित कर. तूं वीर्य (जोवन शक्ति) आहेस, माझ्यांत जीवन शक्ति स्थापित कर. तूं बळ आहेस, माझ्यांत बळाची स्थापना कर. तूं ओज आहेस, माझ्यांत ओज स्थापन कर. तूं पवित्र क्रोध आहेस, माझ्यांत सुद्धां ह्या पवित्र क्रोधाला स्थापन कर. तूं सहन शक्ति आहेस, माझ्यांत सुद्धां सहन शक्ति स्थापन कर.

— x —

Emancipation : How attained

वेदाहमेतं पुरुषं महान्त-
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वातिमृत्युमेति
नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥४१॥

यजुः० ३१–१८

मैं इस महान्, सूर्य के समान प्रकाशस्वरूप, अंधकार से पृथक् परमात्मा को जानता हूँ। उसी को जान कर प्रत्येक प्राणी मृत्यु से छुटकारा पाता है। मोक्ष के लिए इसके अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है।

सूर्याप्रमाणें प्रकाशस्वरूप अंधकारापासून अलिप्त अशा महान् परमेश्वराचें मला ज्ञान झालें. या ज्ञानानेंच प्रत्येक प्राणी मृत्यूपासून सुटका पावतो. मोक्षाकरितां याव्यतिरिक्त कोणताही दुसरा मार्ग नाहीं.

— xi —

The triumphant, invulnerable Soul

अपाम सोमं अमृता अभूम
अगन्म ज्योतिरविदाम देवान्।
किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः
किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य ॥४२॥

यजुः० ८–४८–३

मैंने सोम का पान किया है, मैं अमर हो गया हूँ; मैंने प्रकाश पा लिया है; मैंने देवों (दिव्यगुणों) को प्राप्त कर लिया है। अतः अब निश्चय रूप से शत्रु हमारा क्या कर सकता है और मरणशील व्यक्ति की हिंसा, हे अमृत देव! मेरा क्या बिगाड़ सकती है?

मीं सोमपान केलें आहे. मी अमर झालों आहे. मी ज्ञानाच्या प्रकाशाशीं एकरूप झालों आहे. मीं दिव्यत्व प्राप्त केलें आहे. मग आतां शत्रु आमचें काय करूं शकतो आणि हे अमृत-देवा एक साधारण मर्त्य माझें काय बिघडवूं शकतो?

III. THE UPANISHADS

(a) The holy Name, Om

Yama to Nachiketa

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति
तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ॥४३॥

कठ २-१५

सब वेद जिस पद की व्याख्या करते हैं, सब तप जिसका वर्णन करते हैं, जिसे पद की कामना करते हुए व्यक्ति ब्रह्मचर्य को धारण करते हैं, उस पद को मैं तुझे संक्षेप में बतलाता हूं—वह पद ओ३म् है।

सर्व वेद ज्यावर व्याख्यान करतात, साधनमार्ग ज्याचा पुरस्कार करतात, ज्यासाठीं साधक ब्रह्मचर्य आचरितात, त्या पदाचें स्वरूप मी तुला थोडक्यांत सांगतों. तें पद म्हणजे "ओम्" होय.

एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म एतद्ध्येवाक्षरं परम्।
एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत् ॥४४

कठ २-१६

निश्चय रूप से यह अक्षर ही ब्रह्म है। यह अक्षर ही परम—सब से श्रेष्ठ है। इसी को जान कर जो पुरुष जिस वस्तु की कामना करता है वह उसे प्राप्त हो जाती है।

खात्रीनें हेंच तें अविनाशी ब्रह्म, हें अक्षर ब्रह्मच सर्वांत श्रेष्ठ आहे. ज्याला याचें ज्ञान झालें त्याच्या सर्व कामना पूर्ण झाल्या.

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम् ।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते ॥४५॥

कठ २-१७

ओ ३ म् का यह आलम्बन श्रेष्ठ है, सबसे उत्कृष्ट है। इसी आलम्बन को जान कर मनुष्य ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

ओ३म् हाच श्रेष्ठ आलंबन आहे, सर्वांत उत्कृष्ट आधार आहे. एतद्विषयक ज्ञानानें मनुष्य ब्रह्म लोकांत प्रतिष्ठा पावतो.

(b) Arise, Awake !

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं
पथस्तत् कवयो वदन्ति ॥४६॥

कठ ३-१४

उठो, जागो और श्रेष्ठ पुरुषों को पाकर (उनके सत्संग से) ज्ञान प्राप्त करो, किन्तु जैसे छुरी की धार अतीव तीक्ष्ण और पैनी होती है उसी प्रकार ज्ञानी पुरुषों ने इस मार्ग को अत्यन्त दुर्गम बतलाया है।

उठा, जागे व्हा आणि श्रेष्ठ पुरुषाच्या सहवासानें ज्ञान प्राप्त करा. हा मार्ग सुरीच्या धारेप्रमाणें अति दुर्गम असें ज्ञानी म्हणत आले आहेत.

(c) The Infinite Self and the Finite Self

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया
समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्य-
नश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥४॥

मुण्डक ३—१—१

दो पक्षी हैं। वे परस्पर प्रेमी और सखा हैं। एक ही वृक्ष पर बैठे हुए हैं। उन में एक उस वृक्ष के स्वादिष्ट फलों को खाता है और दूसरा न खाता हुआ केवल देखता है।

दोन जोडीचे, एकमेकावर प्रेम करणारे पक्षी आहेत. त्यांतून एक त्या वृक्षाचीं स्वादिष्ट फळें खात असतो आणि दुसरा न खातां फक्त पाहात असतो.

समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नो
अनीशया शोचिति मुह्यमानः ।
जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीश-
मस्य महिमानमिति वीतशोकः ॥८॥

मुण्डक ३-१-९

उस वृक्ष पर पुरुष अर्थात् जीवात्मा, फल चखने में निमग्न अपनी दुर्बलता से मोह में पड़ा शोक करता है; किन्तु जब वह अपने से भिन्न उस दूसरे अर्थात् ईश्वर को और उसकी महिमा को जान जाता है तो शोकरहित हो जाता है।

त्या झाडावर पुरुष अर्थात् जीवात्मा फळ खाण्यांत निमग्न असून आपल्या दुर्बळतेमुळें मोहांत रुतलेला व शोक करीत आहे. परन्तु जेव्हां त्याला आपल्याहून भिन्न अशा त्या दुसऱ्या अर्थात् ईश्वराचें आणि त्याच्या महिम्याचें ज्ञान होतें तेव्हां तो शोकापासून अलिप्त होतो.

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन ।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः
तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम् ॥४६॥

मुण्डक ३–२–३

यह आत्मा व्याख्यान से नहीं मिलता, न बुद्धि से और न बहुत सुनने पढ़ने से । यह आत्मा जिसे चुनता है, जिस पर अनुग्रह करता है, उसी को प्राप्त है। उसी कृपापात्र के सम्मुख यह अपने आपको प्रकट करता है ।

हा आत्मा प्रवचनानें, बुद्धीनें, श्रवणानें किंवा वाचनानेंही ज्याला निवडून घेतो, ज्यांवर कृपा करतो त्यालाच प्राप्त होतो. तो त्या कृपा पात्र व्यक्तीपुरतेंच स्वस्वरूप प्रगट करतो.

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यो
न च प्रमादात्तपसो वाप्यलिंगात्।
एतैरुपायैर्यतते यस्तु विद्वान्
तस्यैष आत्मा विशते ब्रह्मधाम ॥ ५० ॥

मुण्डक ३--२--४

यह आत्मा निर्बल व्यक्तियों को प्राप्त नहीं होता; प्रमाद, तप और चिह्नत्याग अर्थात् संन्यास से भी नहीं मिलता। जो विद्वान् इन त्याग आदि उपायों से बराबर यत्न करते रहते हैं उनको यह आत्मा प्राप्त होता है और वे ब्रह्मधाम में प्रवेश करते हैं।

हा आत्मा निर्बळ व्यक्तींना प्राप्त होत नसतो. प्रमाद, तप आणि चिन्ह त्याग म्हणजे संन्यासानें सुद्धां मिळत नसतो. जे विद्वान ह्या त्यागादि उपायांनीं निरन्तर प्रयत्न करीत असतात त्यांना हा आत्मा प्राप्त होत असतो, आणि ते मुक्तीला प्राप्त होत असतात.

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा
सम्यग् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् ।
अन्तः शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो
यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः ॥ ५१ ॥

मुण्डक ३—१—५

निश्चय से यह आत्मा सत्य, तप, सम्यग् ज्ञान और नित्य ब्रह्मचर्य से प्राप्त होता है । अन्दर शरीर में यह शुभ्र और ज्योतिर्मय है जिसके दर्शन संयमी पुरुषों को होते हैं जिनके दोष नष्ट हो चुके हैं ।

खरोखर, हा आत्मा सत्य, तप, सम्यग्ज्ञान आणि नित्य ब्रह्मचर्य यांनींच प्राप्त होतो. या शरिरांत तो ज्योतिरूप आणि शुभ्र असून ज्यांचे सर्व दोष नाहीसे झाले आहेत अशा योग्यांसच तो दिसतो.

इह चेदवेदीदथसत्यमास्ति
नचेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।
भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः
प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥ ५२ ॥

केन २—५

यदि यहाँ ही ब्रह्म को जान लिया, तब तो ठीक है; यदि यहाँ न जाना तो महान् हानि है। धीर पुरुष सब प्राणियों में प्रभु की खोज करते हुए इस लोक से चल कर अमृत अर्थात मुक्त होते हैं।

ब्रह्मज्ञान या जन्मींच झालें तर छानच, पण जर झालें नाहीं तर फार हानि आहे. धीर पुरुष सर्वात्मैक्यभावामुळें इहलोकांतील यात्रा समाप्त झाल्यानंतर अमृत अर्थात् मोक्ष पदाला प्राप्त करतात.

(e) On the nature of God

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता
तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥५३॥

श्वेता० ३—१९

यह ब्रह्म हाथ पैर से रहित है, परन्तु अत्यन्त वेगवान् और ग्रहण करने वाला है। नेत्र न होते हुए भी सब को देखता है, कान न होते हुए भी सब कुछ सुनता है। वह सब जानने योग्य वस्तुओं को जानता है। उसका जानने वाला कोई नहीं है। उसे मुख्य महान पुरुष कहा गया है।

ह्या ब्रह्माला हात पाय नाहींत परंतु तें फार मोठें वेगवान् आणि सर्व कांहीं ग्रहण करणारें आहे. डोळे नसून सुद्धां तें सर्वांना पाहातें. कान नसतां सर्व कांहीं ऐकतें. सर्व ज्ञातव्य वस्तूंना ओळखतें. त्याला ओळखणारा कोणी नाहीं. त्यालाच मुख्य, महान् पुरुष म्हटलें आहे.

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं
तं देवतानां परमं च दैवतम् ।
पतिं पतीनां परमं परस्तात्
विदाम देवं भुवनेशमीड्यम् ॥५४॥

श्वेता० ६—७

उस ऐश्वर्यशालियों के भी परम महेश्वर, देवों के परम देव, रक्षकों के रक्षक, श्रेष्ठ से श्रेष्ठ भुवनों के स्वामी, स्तुति करने योग्य देव को हम जानें।

ईश्वरांचा परम ईश्वर, देवतांचें परमदैवत, संरक्षकांचा संरक्षक, श्रेष्ठांत श्रेष्ठ, अशा स्तुतियोग्य भुवनेशाचें आपण ज्ञान करून घेऊं.

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते
न तत्समश्चाभ्याधिकश्च दृश्यते।
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ॥५५॥

श्वेता ० ६—८

इस ब्रह्म का न कोई कार्य है और न कोई इन्द्रिय। न कोई उसके समान है और न कोई उससे बड़ा। इसकी श्रेष्ठ शक्ति अनेक प्रकार की सुनी जाती है। इसके ज्ञान, बल और क्रिया सब स्वाभाविक हैं।

या ब्रह्माचें, कशाचेंही कार्य किंवा कारण नाहीं कोणी त्याच्यासारखा किंवा त्याच्याहून थोरही नाहीं. त्याची श्रेष्ठ शक्ति पुष्कळ प्रकारची आहे. त्याचें ज्ञान, बळ आणि क्रिया सर्व स्वाभाविक आहे.

न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके
न चेशिता नैव च तस्य लिङ्गम्।
स कारणं करणाधिपाधिपो
न चास्य कश्चिज्जनिता नचाधिपः॥५६॥

श्वेता ० ६—९

संसार में उसका कोई स्वामी नहीं है, न कोई उसे वश में करने वाला है और न कोई उसका चिह्न है। वह जगत् का कारण है, इंद्रियों के स्वामी जीव का अधिपति है, किन्तु उसका कोई उत्पादक और अधिपति नहीं है।

ह्या संसारांत त्याचा कोणी स्वामी नाहीं, कीं नियता नाहीं किंवा त्याची स्पष्टशी कांहीं खूण नाहीं. तें जगाचें कारण आहे. तें इंद्रियांचें नियंत्रण करणाऱ्या जीवाचा अधिपति आहे. परंतु त्याचा कोणी उत्पादक अथवा अधिपति नाहीं.

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥ ५७॥

श्वेता० ६—११

वह एक देव सर्व प्राणियों में छिपा हुआ, सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है। वह कर्मों का अध्यक्ष, सब प्राणियों का निवास-स्थान, साक्षी, चेतन, निर्द्वन्द्व और निर्गुण है।

तो एक देव सर्व प्राण्यांत लपलेला, सर्व व्यापक आणि सर्वान्तर्यामी आहे. तो कर्माचा अध्यक्ष सर्व प्राण्यांचें जीवनाश्रयस्थान, सर्व साक्षी, चैतन्यमय, निर्द्वन्द्व आणि निर्गुण आहे.

एको वशी निष्क्रियाणां बहूना-
मेकं बीजं बहुधा यःकरोति ।
तमात्मस्थं येऽनु पश्यन्ति धीरा-
स्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम् ॥५८॥

श्वेता ० ६—१२

वह अनेक निष्क्रिय पदार्थों को वश में करने वाला है और एक बीज से अनेक रूप वाले संसार को उत्पन्न कर देता है। जो धीर पुरुष अपनी आत्मा में स्थित इस प्रभु को देखते हैं उन्हें शाश्वत सुख प्राप्त होता है अन्यों को नहीं।

तो अनेक निष्कीय पदार्थांचा नियंता आहे. आणि एका बीजा-पासून अनेक प्रकारच्या संसाराला निर्माण करणारा आहे. जो धीर पुरुष आपल्या आत्म्यांत राहाणाऱ्या त्या प्रभूचें दर्शन करतो त्याला शाश्वत सुख प्राप्त होत असतें. दुसऱ्यांना नाहीं.

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनाना-
मेको बहूनां यो विदधाति कामान् ।
तत्कारणं सांख्ययोगाधिगम्यं
ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्व पाशैः ॥ ५६ ॥

श्वेता० ६—१३

वह नित्य सत्ताओं में नित्य, चेतनों का भी चेतन, एक होता हुआ अनेक जीवों की कामनाओं को पूर्ण करता है। उस सांख्य तथा योग से प्राप्त होने योग्य जगत् के कारण परमेश्वर को जान कर मनुष्य सब बन्धनों से मुक्त हो जाता है।

तो नित्यांत नित्य, चेतनांत चेतन, तो एक असून सुद्धां अनेक जीवांची इच्छा पूर्ण करतो. त्या सांख्यानें आणि योगानें प्राप्त होणाऱ्या परमेश्वराच्या ज्ञानानें मनुष्य सर्व बंधनांतून मुक्त होतो.

न तत्र सूर्यो भाति न चंद्रतारकं
नेमा विद्युतो भान्ति कुतो ऽयमाग्निः ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥ ६० ॥

श्वेता ० ६—१४

वहां न सूर्य चमकता है, न चन्द्र, न तारकावलि; न बिजली चमकती है––फिर यह अग्नि कैसे चमक सकती है ? वास्तव में उसके प्रकाशित होने से ही यह जगत् प्रकाशित होता है। उसके प्रकाश से ही यह सब चमक रहा है ।

तेथें ना सूर्य, ना चंद्र, ना तारे, ना विद्युत्. मग अग्नीची गोष्ट कोठून ? खरोखर पाहिल्यास तें परमतत्त्व स्वयंप्रकाश असून त्याच्या तेजानें हें जग प्रकाशित होतें.

IV. THE BHAGAVAD GITA

(a) The Soul is Eternal and Immortal

न त्वेवाहं जातु नासं नत्वं नेमे जनाधिपाः ।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥६१॥

गीता २—१२

न तो ऐसा ही है कि मैं इसके पहले कभी न था या तुम कभी न थे, या ये राजा कभी न थे, और न ऐसा ही है कि इसके बाद हम नहीं रहेंगे ।

खरोखर मी, तूं, किंवा हे राजे अस्तित्वांत नाहींत असें यापूर्वी कधीं नव्हतें व यापुढेंहि कधीं होणार नाहीं.

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥ ६२ ॥

गीता २–१३

आत्मा को जैसे इस देह में लड़कपन, जवानी और उसके बाद बुढ़ापा प्राप्त होता है वैसे ही उसे इस देह के पश्चात् दूसरे शरीर की प्राप्ति होती है। इस विषय में (अर्थात् एक शरीर छोड़ कर दूसरे शरीर में जाने से) धीरे पुरुषों को शोक नहीं होता।

जसें ह्या शरिरास बालपण, यौवन आणि त्यानन्तर म्हातारपण येतें, त्याचप्रमाणें त्याला या शरिरानन्तर दुसऱ्या शरिराची प्राप्ति होते. ह्या बाबतींत धीर पुरुषांना शोक होत नाहीं.

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥६३॥

गीता २—१६

जिसका अस्तित्व नहीं है उसका होना असंभव है और जिसकी सत्ता है उसका कभी नाश नहीं हो सकता। तत्त्व जानने वाले ज्ञानी पुरुषों ने इन दोनों में यही भेद निश्चित किया है।

ज्याचें अस्तित्व नाहीं त्याचें उत्पन्न होणें असम्भव आहे आणि ज्याची सत्ता आहे त्याचा कधींही नाश होऊं शकत नाहीं. तत्त्व ओळखणाऱ्या ज्ञानी पुरुषांनीं ह्या दोन्हींत हाच भेद निश्चित केला आहे.

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते॥ ६४ ।

गीता २—१९

जो आत्मा को मारने वाला समझता है और जो इसे मरा हुआ समझता है, वे दोनों ही मूर्ख हैं। न यह मारता है, न मरता है।

जो आत्म्याला मारणारा म्हणून समजतो आणि जो ह्याला मेलेला असें म्हणतो ते दोघेही मूर्ख आहेत. न हा मारतो न मरतो.

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥६५॥

गीता २—२२

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र फेंककर नये ग्रहण करता है, उसी प्रकार आत्मा भी पुराना शरीर छोड़ कर नवीन शरीर को ग्रहण करता है।

ज्याप्रमाणें मनुष्य जुनीं वस्त्रें टाकून नवीन धारण करतो त्याचप्रमाणें जीवात्मा सुद्धां जुन्या शरिराला सोडून नवीन शरीर ग्रहण करतो.

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥६६॥

गीता २–२३

आत्मा को न शस्त्र काट सकते हैं, न आग जला सकती है, न पानी भिगो सकता है और न हवा सुखा सकती है।

आत्म्याला ना शस्त्र कापूं शकतें ना अग्नि जाळूं शकतो, न तो पाण्यानें ओला होतो ना हवेनें तो वाळूं शकतो.

(b) The beloved of Krishna*

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी ॥६७॥
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥६८॥

गीता १२—१३, १४

जो किसी से द्वेष नहीं करता, जो प्राणिमात्र का मित्र है, दयाशील है, जो ममता और अहंकार से रहित है, जिसके लिए सुख और दुःख दोनों समान है, जो क्षमावान् है—

जो सर्वदा सन्तुष्ट, स्थिरचित्त, संयमी तथा दृढ़निश्चयी है और जिसने मन और बुद्धि मुझे अर्पण कर दिये हैं, ऐसा मेरा भक्त मुझे प्रिय है ।

सर्व प्राणिमात्रांविषयीं निर्वैर, मित्र, दयाशील, ममत्वरहित अहंकारशून्य, सुखदुःखाविषयीं समबुद्धि, क्षमाशील, संतुष्ट, सदा कर्तव्यतत्पर, मनोनिग्रही, दृढनिश्चयी आणि देवाचे ठिकाणींच मनबुद्धि अर्पण करणारा असा भक्त देवास प्रिय होतो.

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥६९॥

गीता १२—१५

जिससे न लोगों को भय है और न जो लोगों से डरता है, जो हर्ष, क्रोध, भय आदि उद्वेगों से मुक्त हो गया है वह मुझे प्रिय है।

ज्याच्यापासून लोकांना भय नाहीं आणि जो लोकांना भीत नाहीं, जो हर्ष, क्रोध, भीति उद्वेगापासून मुक्त झाला आहे, तो मला प्रिय आहे.

अनपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागीयो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥ ७० ॥

गीता १२—१६

जो किसी का मुहताज नहीं है, पवित्र, दक्ष, उदासीन और दुःखरहित है तथा जिसने सर्व प्रकार के कार्यों का आरंभ करना छोड़ दिया है वह मेरा भक्त मुझे प्रिय है।

जो स्वतंत्र, पवित्र, दक्ष, उदासीन आणि दुःखावेगळा आहे तसेंच ज्यानें सर्व प्रकारच्या कार्यारम्भाला सोडून दिलें आहे तो माझा भक्त मला प्रिय आहे.

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ॥७१॥

गीता १२—१७

जो न किसी से प्रसन्न होता है और न द्वेष करता है; जो न शोक करता है और न आकांक्षा करता है; जिससे शुभ और अशुभ दोनों का परित्याग कर दिया है ; जो भक्तिमान् है, वह मुझे प्रिय है।

जो कशानें प्रसन्न होत नाहीं आणि कुणाचा द्वेष करीत नाहीं, जो शोकही करीत नाहीं आणि आकांक्षाही बाळगीत नाहीं. ज्यानें शुभ आणि अशुभ दोन्हींचा परित्याग केला आहे असा भक्त मला प्रिय आहे.

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः ॥ ७२ ॥
तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केन चित् ।
अनिकेतःस्थिरमतिर्भक्तिमान् मे प्रियो नरः ॥७३॥

गीता १२—१८, १९

जो शत्रु और मित्र को, मान और अपमान को, शीत और उष्ण को, तथा सुख और दुःख को समान समझता है; जो आसक्तिरहित है––

जिसके लिए निन्दा और स्तुति समान है, जो मौन रहता है, जो कुछ मिल जाय उसी में संतुष्ट रहता है, जो गृहविहीन तथा स्थिर बुद्धिवाला है, वह भक्तिमान् पुरुष मुझे प्रिय है।

शत्रुमित्र, मानापमान, शीतउष्ण, निंदा स्तुति, सुखदुःख यांविषयीं जो समचित्त आहे असा निरासक्त, विवेकी, निराश्रयी, स्थितप्रज्ञ व संतुष्ट भक्त परमेश्वरास प्रिय होतो,

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥ ७४ ॥

गीता १२—२०

जो मुझ में श्रद्धा रख कर, मुझे मान कर, इस उपरोक्त अमृत के समान हितकारक धर्म का आचरण करते हैं, वे भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय है।

जो माझ्यावर श्रद्धा ठेवून माझें अस्तित्व पत्करून उपरोक्त अमृतसमान हितकारक धर्माचें आचरण करतात, ते भक्त मला अत्यन्त प्रिय आहेत.

(c) The way to success in life

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥७५॥

गीता १८—७८

जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण है और जहां धनुर्धर अर्जुन है, वहां धन, सम्पत्ति, विजय, शाश्वत, ऐश्वर्य और अटल नीति है, ऐसा मेरा मत है।

जेथें योगेश्वर कृष्ण आणि धनुर्धर अर्जुन आहे तेथें वैभव आणि विजय हींहि आहेत असें माझें निश्चित मत आहे.

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।॥ ७९॥

प्रभो। तुमही मेरी माता और तुमही मेरे पिता हो; तुमही मेरे बन्धु हो, और तुमही मेरे सखा हो; तुमही मेरी विद्या और तुमही मेरे धन हो ! हे देवों के देव ! तुमही मेरे सर्वस्व हो ।

ईश्वरा, तूंच माझी माता, तूंच माझा पिता, तूंच बंधु, तूंच सखा, तूंच विद्या, तूंच धन; हे देवाधिदेवा, तूंच माझें सर्वस्व आहेस !